मीरा मतवारी

गोपीनाथ पारीक 'गोपेश'
अध्यक्ष साहित्य सरोवर संस्था
जयपुर

राजस्थान वीरों की धरती होने के साथ ही सन्तों-भक्तों की भी धरती रही है। इनमें मीरा एक ऐसी भक्त- विभूति है, जिसके शरीर की प्रत्येक रक्तवाहिनी में ऊष्मा है, प्रत्येक गति में निबांध लय है तो प्रत्येक शब्द में माधुर्य है। माधुर्य के साथ निर्भयता और सहृदयता का समन्वित ऐसा रूप अन्यत्र अन्यत्र मिलना कठिन है। स्वामी विवेकानन्द ने एक बार कहा था -जो बद्ध से एक रूप हुआ, वही वीर, वही सच्चा निर्भय है। ब्रह्म की उपासना करने से उसको किसी का भय नहीं रहता। उसके आनन्द में किसी प्रकार की कमी नहीं आती है। मीरा इन्हीं ब्रह्मरूप श्रीकृष्ण की भक्ति में निर्भय होकर लीन रही और आनन्दित होती रही। जब भक्त अपना हृदय उस भगवान् को समर्पित कर देता है तो भगवान् को भी अपना हृदय भाष भक्त को देना पड़ता है

साधवो हृदयं मह्यं साधूनां हृदयं त्वहम् ।
मदन्यत् ते न जानन्ति नाहं तेभ्यो मनागदपि ॥ -श्रीमद्भागवत 1-4-68

भक्तमाल में नामादासजी ने इस कलि- काल में गोपियों के समान कृष्ण प्रेम को प्रकट करने वाली भक्तिमती मीरा के विषय में स्पष्ट कहा है-

भक्ति निसान बजाय के का हूँ ते नाहिन लजी। लोक लाज कुल श्रंखला तजिमीरा गिरिधर भजी।।

मरुधरा राजस्थान में जोधपुर के संस्थापक राव जोधा के पुत्र मेड़ता के राजा राव दूदा की पौत्री के रूप में इस मीरा का जन्म संवत् 1561 में मेड़ता नगर में हुआ। मीरा के पिता का नाम रतनसिंह और माता का नाम कांता झालानी वीर कुँवरी था। मीरा जब गर्भ में थी तब उसकी माता ने नौ महीनों तक भक्तिभाव से भागवत का श्रवण और मनन किया था।

सूर्य के नामों में एक नाम मिहिर भी है। जो तेजस्वी हो, उसे मिहिर कहते हैं। मीरा के जन्मते ही, तेज झलक रहा था अतः पितामह ने उसका नाम मिहिरा' रखा, जो आगे बदल कर मीरा हो गया।

मीरा जब 4-5 वर्ष की थी तब एक बार ब्रज से सन्त माधवेन्द्र पुरी आये थे, जिन्होने मीरा को गिरधर की मूर्ति प्रदान की थी। मीरा उन गिरधर की सेवा-पूजा में लगी रहती थी। राव दूदाजी ने मीरा की शिक्षा के लिये राजपुरोहित की देखरेख में पण्डित गजाधर जोशी को नियुक्त किया था। संगीत की शिक्षा के लिये आचार्य बिहारीदास को और योग की शिक्षा के लिये संत निवृति नाथ को नियुक्त किया था।

एक दिन मीरा अपनी माता के साथ महल के झरोखे से बाजे-गाजे के साथ गुजरती बारात को देख रही थी। हाथी पर बैठे दूल्हे को बैठा देखकर मीरा ने माँ को कहा- 'माँ, यह कौन है?' माँ ने बताया - मह बींद (दूल्हा) है'। इस पर मीरा ने पूछा - 'माँ मेरा बींद कहाँ है? इस प्रकार मीरा के बार बार पूछने पर माँ ने उत्तर दिया - 'तेरा बींद तो गिरधर गोपाल है। इसके पश्चात् तो उस गिरधर गोपाल को ही अपना पति मान कर उनकी पूजा-आराधना में अधिक तन्मय हो कर नाचने गाने लगी -

माई म्हा नै सुपणा में परण्या दीनानाथ
छप्पन कोट जना पधारया, दूल्हा सिरी बृजनाथ।
सुपना माँ म्हाने परण गया, पाया अचल सुहाग ।
मीरा नै गिरधर मिल्या री, पुरब जनम रो भाग ।।

मेड़ता के राजा राव दूदा के देहान्त के पश्चात् उनके जेष्ठ पुत्र वीरम देव मेड़ता की गद्दी पर बैठे। वीरमदेव भी मीरा की सब प्रकार से देखरेख करते थे। वे मीरा से बहुत लाड-प्यार करते थे। जब मीरा बारह वर्ष की थी तब उसका विवाह चित्तौड़ के सिसोदिया वंश में महाराणा , सांगा के पुत्र राजकुमार भोजराज के साथ सम्पन्न हुआ।

विवाह के समय मीरा ने अपने गिरधर गोपाल की उस मूर्ति को पहले ही विवाह मंडप में रख दिया था और अपने पति के साथ इस मूर्ति के संग भी फेरे ले लिये थे। इसका कारण सखियों के द्वारा पूछे जाने पर मीरा ने उत्तर दिया

ऐसे वर को के वरूँ जो जनमें अर मर जाय।
वर बरियो गोपाल जी म्हारो चुड़लो अमर हो जाय ।।

राजस्थान में रूप गुण सम्पन्न वर के लिये बालिकायें और अचल सुहाग के लिये विवाहिता स्त्रियाँ गणगौर की पूजा करती है। जब मीरा को भी गणगौर की पूजा के लिये कहा गया तो उसने उत्तर दिया.

ना म्हें पूजां गौरख्या जी, ना पूजां अन देव। म्हें पूजां गोपालजी, थे कोई जानो भेव ।।

सच ही है पति को परमेश्वर मानने वाली तो अनेक स्त्रियाँ हैं परन्तु परमेश्वर को पति मानने वाली तो मीरा एक ही हुई थी। यद्यपि मीरा का सच्चा पति तो गिरधर गोपाल ही था फिर भी उसने अपने लौकिक पति को भी कभी अप्रसन्न नहीं किया। पति भोजराज ने कभी मीरा का विरोध नहीं किया। मीरा की पद रचना से उन्हें बड़ा हर्ष होता था। वे भक्तिमती मीरा को पाकर गौरवान्वित् थे। मीरा की कृष्ण भक्ति से ही प्रभावित होकर उन्होंने मीरा के लिये पूजा-आराधना हेतु चित्तौड़गढ़ में एक कृष्ण- मन्दिर बनवाया था, जिसमें मीरा भजन-कीर्तन तथा साधु सन्तों से सत्संग करती थी।

विवाह के पाँच-सात वर्ष बाद ही किसी रोग के कारण जब पति भोजराज का स्वर्गवास हो गया तो मीरा को सती होने के लिये बाध्य किया गया। मीरा ने सती होने से मना कर दिया और कहा कि मैं विधवा नहीं हूँ -

गिरधर गास्यां सती न होस्यां म्हें वर पायो धन नामी ।

संवत् 1584 (सन् 1527) में मीरा के पिता और उसके चाचा बाबर के विरुद्ध खानवा के युद्ध में राणा सांगा की ओर से लड़ते हुये वीर गति को प्राप्त हुये। कुछ दिनों बाद ही राणा सांगा का भी देहान्त हो गया। राणा सांगा की मृत्यु के पश्चात् सांगा के द्वितीय पुत्र रतनसिंह मेवाड़ के शासक बने । इन्होने कभी मीरा का कोई विरोध नहीं किया, किन्तु ये रतनसिंह भी अधिक समय तक जीवित नहीं रहे। रतनसिंह की मृत्यु के पश्चात सन् 1531 में रतनसिंह का छोटा भाई विक्रमादित्य मेवाड़ की गद्दी पर बैठा। वह क्रूर स्वभाव और अनुदार विचारों का व्यक्ति था। राणा सांगा के छोटे भाई पृथ्वीराज के द्वारा उत्पन्न दासी पुत्र बनवीर उसका मित्र था। वह विक्रमादित्य को बहकाया करता था। राजघराने की एक विधवा बहु इस प्रकार मन्दिर में नाचती है, गाती है, इकतारा बजाती है और साधुओं की संगत करती है - यह सब मीरा के देवर मेवाड़ के महाराणा विक्रमादित्य को अच्छा नहीं लगा। वह मीरा को ऐसा करने से मना करता था किन्तु मीरा ने देवर के प्रतिरोध की कोई परवाह नहीं की और वह गाती रही - **'बरजी मैं काहू की न रहूँ' तेरा कोई नीं रोकनहार मगन होय मीरा चली'।**

समझाने पर भी मीरा जब नहीं मानी तो उसे मारने हेतु विष दिया गया, उसके पास पिटारे में रख कर सांप भेजा गया, किन्तु विष कृष्ण चरणोदक बन गया और सोप सालग राम की मूर्ति बन गई। मीरा का कुछ नहीं बिगड़ा। उसे अपने आराध्य पर पूरा भरोसा था और इसी विश्वास के कारण: उस ने अपने देवर को निर्भय हो कर कह दिया -

थारी मारी ना मरूँ, मेरो राखणहारो और ।

मीरा अपना दर्द अपने प्रियतम को इस प्रकार सुनाती रही -

जालां रै मोहना जाणां थारी प्रीत ।
प्रेम भगति रो पैड़ो म्हारो, और न जाणां रीत।
इमरित पाई विष क्यूं दीजै, कुणाँ गाँव री रीत ।
मीरा रे प्रभु हरि अविणासी, अपणा जन रो मीत ।।

आखिर मीरा ने मेड़ता के शासक वीरमदेव और उनके पुत्र जयमल जो मीरा के भाई थे उनके आग्रह पर चित्तौड छोड़ दिया और वह मेड़ता आ गई। मेड़ता में वह लगभग पाँच वर्ष रहीं। इसी बीच उधर चित्तौड़ में दासीपुत्र बनवीर ने चित्तौड़ के महाराणा विक्रमादित्य की हत्या कर वह स्वयं राजगद्दी पर बैठ गया। मेड़ता में मीरा के लिये सारी सुविधायें होने पर भी उसका वहाँ मन नहीं लगा। वृन्दावन रसिक राजधानी' को ध्यान में रखते हुये उसने वृन्दावन जाने की इच्छा प्रकट की। वृन्दावन में आकर उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। उसने गाया -

आली, मोहे लागै वृन्दावन नीको ।
घर घर तुलसी ठाकुर सेवा दर्शन गोविन्द जी को ।

वृन्दावन में मीरा लगभग दो वर्ष रही। वहाँ उसने अपने प्रियतम कृष्ण की लीला स्थली का घूम घूमकर अवलोकन किया । वृन्दावन में विभिन्न भक्ति सम्प्रदायों के आचार्य थे। सभी ने ऐसी विदुषी कृष्णभक्त को अपने सम्प्रदायों में दीक्षित करने का आग्रह किया, किन्तु उसने किसी सम्प्रदाय में बँधना स्वीकार नहीं किया। यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना उचित होगा कि सन्त रविदास को मीरा ने गुरु नहीं बनाया था। उसने तो सबकुछ कृष्ण को ही माना था। वह सम्प्रदायमुक्त गुरु शिष्य परम्परा विहीन परम वैष्णव भक्त थी। झालीरानी जो महाराणा सांगा की माता थी, उसने अवश्य सन्त रविदास से दीक्षा ली थी।

वृन्दावन से मीरा द्वारका पहुंची। द्वारकाधीश के दर्शन कर वह डाकोर में रणछोड़ राय जी के मन्दिर में रहने लगी। **म्हारो मन हर लीन्हो रणछोण** गाती और वहीं नृत्य करती। मीरा जहाँ भी गई उसकी सहेली ललिता उसके साथ रही। वह भी पद बना कर गाया करती थी।

उधर पन्नाधाय ने राणा सांगा के सबसे छोटे पुत्र उदयसिंह को बनवीर से बचाकर उसका लालन पालन किया। कुछ समय के बाद मेवाड के उमरा वों ने बनवीर को अपदस्थ कर तेरह वर्षीय उदयसिंहका राज्याभिषेक कर दिया।

उदयसिंह ने चाहा कि कि पूज्यतमा मीराबाई अब चितौड लौट आवें। सूरदास चाम्पावत के नेतृत्व में कुछ राज-

पुरोहितों ने जाकर मीरा को चित्तौड चलने का आग्रहकिया मीरा वहाँ से जाना नहीं चाहती थी। राजपुरोहितों आग्रह के पश्चात् मीरा ने कहा कि- मैं मेरे ठाकुर से आज्ञा लेती हूँ। वह मन्दिर में गई और मन्दिर की मूर्ति मे ही समा गई।

हरि की थी, हरि के लिये ही जी रही थी मीरा, हरिरूप होकर ही हरि में समा गई।

भक्ति के चार स्तर कहे गये हैं- दास्य, वात्सल्य, सख्य और मधुर। लौकिक क्षेत्र में जो श्रृंगार का महत्त्व है, अलौकिक क्षेत्र में वही इस मधुरा भक्ति का है। आचार्य रूप गोस्वामी ने अपने उज्ज्वल नीलमनि' ग्रन्थ में इस भक्ति को ही सर्वश्रेष्ठ मान कर इसे उज्ज्वल एवं रसराज कहा है। इस भक्ति के भक्तों का जो समर्पण भाव है, यही गोपीभाव है। यही गोपी भाव मीरा ने प्राप्त कर लिया था

म्हारा जनम जनम रा साथी। थां नै ना विसरूं दिन राती ।।

इस मधुरा भक्ति के भी दो विभाग हैं - एक तदीया रति और दूसरी मदीया रति। तदीया रति में भक्त अपने आराध्य से कहता है- मैं तेरा हूँ' और मदीथा रति में भक्त कहता है 'तुम मेरे हो' । मीरा गोपियों की भाँति 'मदीया रति' की आराधिका थी। वह अनन्य भाव से गाती थी - 'मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरो न कोई'। मीरा का कृष्णप्रेम ऐसा है जिसे आंसुओं से सींचा गया। यह प्रेम जन्म जन्मों का था। मीरा के हृदय के मधुरभाव मिलन चाहते थे क्योंकि वह कृष्ण की प्रियतमा पत्नी थी। चाहे वह किसी गोपी का अवतार हो या राधा का अवतार। वह प्रेम का पुनीत पाठ पढ़ाने और भक्ति का भव्य भाव जगाने इस धरा पर आई थी। जिस भक्ति के चीर को बहुत से भक्तों ने मिलकर तैयार किया था, उस चीर को तो मतवाली मीरा ने ही ओढा था -

भक्ति का कपास जगदीश' बोया जाट धना, दादू धुनिया ने चुन साफ कर छोड़ा था।

कर्मा जाटिनी ने किया कात कात सूत त्यार, कबीर तुनिन्द मढ़ा चारू चीर चोड़ा था।

नामदेव छीपा ने विछाय भाववेदी पर, नाम नाम भव भक्ति रंग में निचोड़ा था।

देय कर तारी फिर तारो गिरधारी कहि सोईचीर मीरा मतवारी तूने ओढ़ा था।